सब मज़ेदारी है! कथा नीलगढ़

अंकित मौर्य

सब मज़ेदारी है! कथा नीलगढ़ एक उत्साही, जुझारू और कुछ अच्छा करने की तमन्ना रखने वाले युवक की मन को छूने वाली दिलचस्प कथा है। यह कथा जंगल में बसे एक छोटे-से आदिवासी गाँव नीलगढ़ की पगडण्डियों में चलती है। जिन पगडण्डियों में न स्कूल है, न अस्पताल है, न रहने लायक़ घर और न ही राशन पानी। बस है तो अन्याय और मानवीय गरिमा का अभाव।

यह कथा हर युवती-युवा को इन मुश्किल भरी पगडण्डियों पर चलने का हौसला और रास्ता सुझाती है। सं.

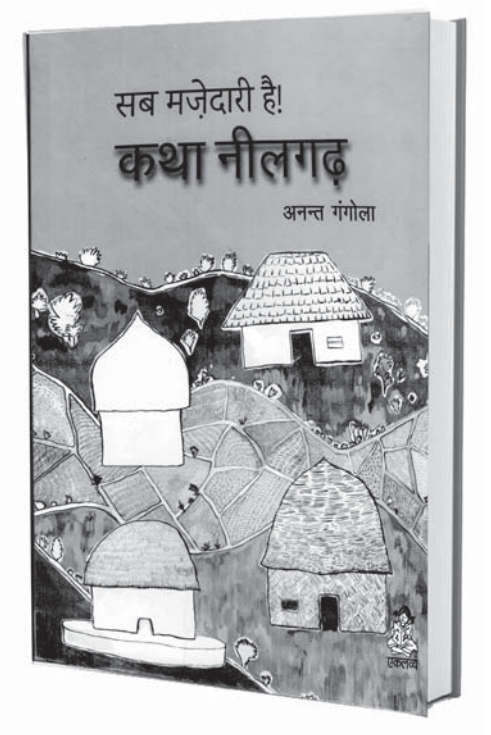

सब मज़ेदारी है! कथा नीलगढ़

लेखक : अनन्त गंगोला

एकलव्य फ़ाउण्डेशन, भोपाल

लेखन और फ़िल्मों की फन्तासी रचनाओं में कभी-कभी किसी ऐसे युवक का ज़िक्र आता है जो शहर की अपनी आराम-भरी ज़िन्दगी छोड़ गाँव में आकर बस जाता है और धीरे-धीरे उसके और गाँव वालों के साझा प्रयासों से गाँव की सूरत-ए-हाल पूरी तरह बदल जाती हैं। अमूमन ऐसे तमाम ज़िक्रों में ऐसा कर पा सकने वाला कोई युवक ही होता है, फन्तासी रचनाओं की कल्पनाएँ भी किसी युवती के ऐसा करने की कल्पना करने में ख़ुद को असहज पाती हैं। अनन्त, 24 साल का वही युवक है लेकिन वह किसी काल्पनिक कहानी का किरदार न होकर, मेरी और आपकी साझी हक़ीक़त में मौजूद एक नवयुवक है जो उत्सुकतावश एक ऐसे गाँव पहुँच जाता है जिसका नाम तक उसने पहले नहीं सुना होता है। और न ही उस समय अनन्त को कोई अन्दाज़ा होता है कि एक मुलाक़ात से शुरू हुआ यह सफ़र लम्बा चलेगा और इसमें रोमांचकता, यात्रा-वृत्तान्त, आत्मकथा, हर्ष, विफलता-सफलता और नाउम्मीदी के ऊपर साहस, धैर्य और आशा की जीत की घटनाओं से बना हुआ ऐसा ताना-बाना होगा जो एक दिन एक किताब की शक्ल में हमारे सामने होगा जिसका नाम है– *सब मज़ेदारी है! कथा नीलगढ़।*

अगर आप अनन्त गंगोला के नाम और काम से परिचित नहीं हैं तो जो बात इस पुस्तक की ओर सबसे पहले ध्यान आकर्षित करती है वह है इसका उपशीर्षक 'सब मज़ेदारी है'। किताब के पन्ने पलटते हुए हाथ और आँखें ख़ुद ही इस बात की पड़ताल में जुट जाती हैं कि आख़िर 'सब मज़ेदारी है' के पीछे का माजरा क्या है। इस सवाल का जवाब जल्दी ही किताब की भूमिका में मिलता है। अनन्त गंगोला के ही शब्दों में, "गाँव के मुखिया रमा दाऊ से की गई पहली बातचीत आज भी स्मृति में ताज़ी है। हालचाल पूछने पर उन्होंने कहा था– सब मज़ेदारी है। मैं हक्का-बक्का रह गया था। तन ढँकने को कपड़े नहीं, सिर छिपाने को मुकम्मल छत नहीं, दो वक़्त के चूल्हे के जलने का कोई सिलसिला नहीं, पर इस सबके बीच, 'क्या हाल हैं?' का जवाब 'सब मज़ेदारी है'। यह आख़िर कैसे हो सकता है? इस बात ने नीलगढ़ में आकर रहने का जैसे निमंत्रण दे दिया।" इस जवाब से उपजे कौतूहल, इसमें छिपे अनौपचारिक निमंत्रण और फिर मुखिया द्वारा गाँव के बच्चों के लिए स्कूल होने के आग्रह की परिस्थितियों में अनन्त गाँव में आकर रहने और बच्चों को पढ़ाने की ज़िम्मेदारी अपना लेते हैं। इस ज़िम्मेदारी का निर्वहन केवल बच्चों और उनकी शिक्षा तक सीमित नहीं रहा, इसमें अनेक लोग और घटनाएँ जुड़ीं, इस सफ़र ने न सिर्फ़ अनन्त और नीलगढ़ को प्रभावित किया, किसी गन्ध की तरह नीलगढ़ में हो रहे कामों की सुगन्ध आसपास के इलाक़ों तक भी फैली और इसका असर वहाँ भी दिखा। इन अनुभवों, प्रयोगों, सीख-समझ और नीलगढ़ में बीते दिनों की यादों का यह दस्तावेज़ अनेक नज़रियों का समागम है जिसमें कभी एक शोधकर्ता अपनी बात रखता है और कभी एक शिक्षक गर्व से अपनी कक्षा और अपने विद्यार्थियों से आपका परिचय कराता है। कभी एक नौजवान की आवाज़ सुनने को मिलती है जो अपने आसपास की असमानताओं के ख़िलाफ़ लोगों को जागरूक कर रही है, और कभी एक समझदार व्यक्ति की समझ सामने आती है जो यह जानती है कि किसी भी काम को करने का सबसे बेहतर तरीक़ा उसे उन लोगों के साथ और सहयोग से करने का है जिनके जीवन पर इस काम का सबसे अधिक फ़र्क़ पड़ने वाला है।

नीलगढ़ में अनन्त के आने और इस सफ़र की शुरुआत का बुनियादी अध्याय बच्चों के लिए स्कूल खोलना है। अब तक ख़ुद एक विद्यार्थी और शोधार्थी रहे युवक के लिए यकायक ख़ुद को इस नई भूमिका में पाने और विद्यार्थी के रूप में अपने अनुभवों के आधार पर इस नए स्कूल की संरचना तैयार करने की चर्चा बहुत रोचक है। शिक्षण या विद्यालय प्रबन्धन की कोई औपचारिक तालीम या अनुभव के बिना धैर्य और घोर आशावाद साथ लिए अनन्त, बच्चे और गाँव-वासी धीरे-धीरे एक अच्छे स्कूल

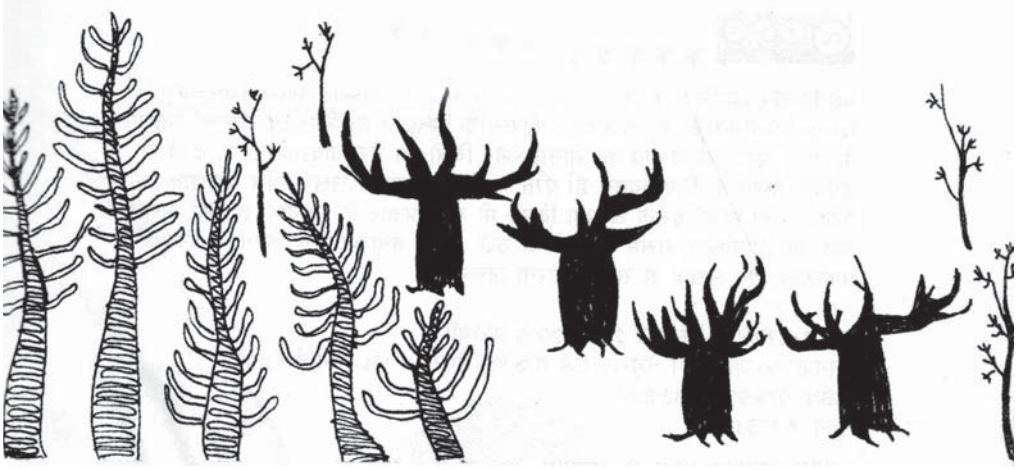

की संकल्पना को बिना किसी ठोस आयोजना, आवश्यकता और दैनिक विकसित होती समझ के आधार पर आकार देते जा रहे थे। यहाँ नवाचार करते रहने की स्वतंत्रता भी थी और वही समाधान भी था। चूँकि 1991 का नीलगढ़ अभावों से ग्रसित एक गाँव था जहाँ आज के जीवन में बुनियादी मानी जाने वाली सुविधाएँ, जैसे– बिजली और सड़क, अभी तक नहीं पहुँची थीं और सामाजिक संसाधन केवल उतने ही थे जितने जीवन के लिए ज़रूरी थे। स्कूल के लिए एक पक्की या स्थाई संरचना का अभाव स्वाभाविक ही जान पड़ता है। ऐसे में ये स्कूल जगह बदल-बदल कर, कभी किसी के घर के दालान में तो कभी वन विभाग की निरीक्षण कुटीर में लगता रहा। कभी-कभी ये स्कूल एक बड़ी-सी समतल चट्टान के पास भी बैठता था जिसके बग़ल से घुटनों तक पानी लिए एक पहाड़ी नाला बहता था। चट्टान का नाम 'चिकना' था और यह जगह किसी पिकनिक स्थल की सी अनुभूति देती थी, अतः इसके पास लगने वाले स्कूल को बच्चे 'चिकनिक' बुलाते थे। चिकनिक स्कूल से दो लाभ हुए। एक तो यह कि पत्थर की समतल सतह पर आकृतियों, अक्षर चित्रों से शुरुआत कर बच्चे धीरे-धीरे लेखन की ओर बढ़ने लगे। दूसरा यह कि चिकनिक स्कूल की जगह दो गाँवों के बीच में पड़ती थी, ऐसे में नीलगढ़ के बच्चों को यहाँ एकत्रित हो कुछ खेलते, कुछ पढ़ते-लिखते देख धुँधवानी गाँव के बच्चे भी इस स्कूल से जुड़ गए और इस तरह धुँधवानी और इसके निवासी भी *कथा नीलगढ़* का हिस्सा और किरदार बन गए। स्कूल में पढ़ाने के लिए कोई नियत पाठ्यक्रम नहीं था। बच्चे और शिक्षक अपनी रुचि और सीखने की गति के अनुसार धीरे-धीरे, पर सधी हुई चाल से, यह सफ़र तय करने लगे। एक समय के बाद जब स्कूल को कुछ और संसाधनों की ज़रूरत महसूस हुई तो गाँव से निकलकर थोड़ा आसपास जाने पर ही मदद के लिए सक्षम हाथ मिलते गए और ये कारवाँ यूँ ही चलता रहा।

किताब में ऐसे कई वृत्तान्त और छोटी-मोटी घटनाओं का ज़िक्र है जो इस पूरे सफ़र को एक आध्यात्मिक स्वरूप देती प्रतीत होती हैं। जितनी ज़रूरत नीलगढ़ को एक नए व्यक्तित्व और नज़रिए की थी, उतनी ही ज़रूरत अनन्त को इस अनुभव की थी जिसके बग़ैर ग्राम्य जीवन, आदिवासी संस्कृति, परस्पर निर्भरता, लोकतंत्र, शासन और बुनियादी सुविधाओं की लोगों तक पहुँच, ग़रीबी और इसमें लिपटी असमानता और शोषण की परतों की उनकी समझ अपरिपक्व और अधूरी थी। नीलगढ़ आने के उनके संयोग से शुरू हुई इस कहानी में नित नए मोड़ आते रहते हैं और अनन्त एक कुशल क़िस्सागो की तरह आपको अपनी बातों के साथ जोड़े रखते हैं। शिक्षक के तौर पर आ रही सफलताओं, विफलताओं, चुनौतियों और बारीक़ियों के बीच जब आप यह महसूस करने लगते हैं कि आप एक समानान्तर ब्रह्माण्ड में लिखी गई 'दिवास्वप्न' पढ़ रहे हैं, अनन्त अपने व्यक्तिगत जीवन का झरोखा खोलकर आपका परिचय अपने सखाओं,

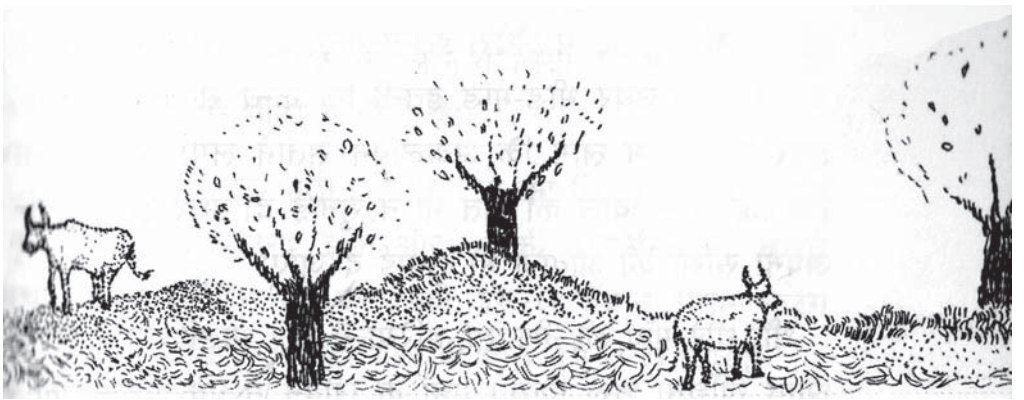

सहचरों, बड़ी-छोटी उम्र के साथियों और उन्हें आकार देने वाले स्थानों से करवाते हैं, और अब जब आप अनन्त के साथ पहले से अधिक आत्मीयता से जुड़ चुके होते हैं तो वो धीरे से आपको लेकर लौट चलते हैं, नीलगढ़।

अकसर *सब मज़ेदारी है! कथा नीलगढ़* में ऐसे क़िस्से आपसे टकराते हैं जो सिर्फ़ अपनी कहानी तक सीमित न रहकर आपको हर्ष और पीड़ा की संवेदना लिए कुछ जाने-पहचाने क़िस्सों तक ले जाते हैं। इनमें से एक क़िस्सा है गाँव नीलगढ़, जिसके बसने के बाद के शान्त, सौम्य और सामान्य जीवन में उस समय भूचाल आ जाता है जब इस जंगल के गाँव में एक नए डिप्टी रेंजर का आना होता है। रेंजर ख़राब ज़ुबान के साथ-साथ ख़राब मिज़ाज और एक घोड़े का स्वामी होता है। घोड़ा अकसर खेतों में घुस जाता और पाल-पोस कर बड़ी की हुई फ़सल कुछ ही समय में खेत हो जाती। असफल विरोध और एक हद से ज़्यादा विरोध में असमर्थता के चलते गाँव के लोग नीलगढ़ छोड़ अलग-अलग जगह बसने को विवश हो जाते हैं। अपना घर छूटने और प्रताड़ना के दुःख से ग्रसित लोग वन विभाग में शिकायत करते हैं। न्याय होता है और डिप्टी रेंजर का उसी रात तबादला कर दिया जाता है। पर लोगों के गाँव छोड़कर जाने और वापस आने में दो महीने का समय बीत चुका होता है। धीरे-धीरे गाँव वापस बस तो जाता है पर दो महीने में खोए अपने पुराने वैभव और समृद्धि को दो दशक में भी वापस नहीं प्राप्त कर पाता। ये कहानी बरबस ही विभाजन और विस्थापन की पढ़ी-सुनी अनेक कहानियों को सामने ला खड़ा कर देती है। इसी तरह एक और कहानी है, 'दुकान जो झोले से फिसल गई', जिसमें छोटी-मोटी ज़रूरत के सामान के लिए बार-बार शहर जाने की मेहनत और ख़र्च बचाने के लिए गाँव में ही एक छोटी दुकान लगाने का फ़ैसला किया जाता है। दुकानदार और शुरुआती जमा पूँजी का जुगाड़ भी हो जाता है, पर सुबह दुकान लेने निकला जालम, शाम को ख़ाली हाथ और हताशा से भरा चेहरा लिए लौट आता है। लेखक यहाँ रेखांकित करता है कि "ग़रीबी महज़ संसाधनों के अभाव का नाम नहीं है। ग़रीबी में अपमान और शोषण की अनेक दास्तानें भी गुँथी हुई हैं।" आगे की कहानी इस बात की है कि किस तरह गाँव के लोग वो दुकान और साथ ही थोड़ी-सी ख़ुशियाँ व आत्म-सम्मान फिर से हासिल करते हैं जो लगभग उनके हाथ से फिसल ही गया था। इन और ऐसी अनेक कहानियों के सार में अँधेरी रातों में टिमटिमाते जुगनुओं की सी शीतलता महसूस होती है और विपदाओं में भी टिके रहने की मानव की दृढ़-निश्चयता के भी परस्पर दर्शन होते हैं।

नीलगढ़ में शिक्षा को लेकर शुरू हुए इस अनुभव की पहुँच सिर्फ़ बच्चों तक सीमित नहीं रही, धीरे-धीरे बड़ों में भी इसे लेकर उत्सुकता और अपनी पीछे छूटी हुई या कभी शुरू ही न की गई पढ़ाई को लेकर उत्कण्ठा के चलते एक रात की कक्षा भी शुरू की जाती है जिसमें गाँव

के पुरुष दिनभर के काम के बाद आकर बैठते और कभी पढ़ाई-लिखाई की बातें चलतीं, और कभी सिर्फ़ बातें चलतीं। अनन्त की भूमिका गाँव में सिर्फ़ शिक्षक तक सीमित न रहकर, बढ़ते समय के साथ और गाँव एवं इसकी संस्कृति व रीति-रिवाजों आदि पर बढ़ती समझ के साथ नए आयाम ले रही थी और एक सुधारक के तत्त्व इसमें शामिल हो रहे थे। हरवाई प्रथा पर समझ बनाने और इसके समाधान की कहानी किसी भी सामाजिक सरोकार रखने वाले व्यक्ति और विशेषतः शोधार्थियों एवं सामाजिक कार्यकर्ताओं को अवश्य ही पढ़नी चाहिए। यहाँ ख़ास बात यह भी है कि इसमें दशकों से चली आ रही एक कुरीति से निजात दिलाने की मक़सदपूर्ण कोशिश के साथ-साथ एक लोकतांत्रिक देश के जागरूक नागरिक के रूप में अपने ज्ञान और समझ के सही उपयोग से लाए जा सकने वाले बदलाव की एक सकारात्मक झलक भी है।

अब तक के विमर्श से अगर कहीं ऐसा प्रतीत हो रहा हो कि नीलगढ़ में और अनन्त के साथ घटित हो रही घटनाएँ सिर्फ़ सुनहरी हैं और इनमें चुनौतियाँ हैं भी तो केवल किसी महत्त्वपूर्ण सबक़ की भूमिका के रूप में, तो ऐसा नहीं है। हालाँकि इसे पढ़ते हुए अनन्त काफ़ी आशावादी और सकारात्मक व्यक्तित्व के नज़र आते हैं और यह तत्त्व बार-बार उनकी लेखनी में प्रतिबिम्बित होते हैं। उन्होंने अपनी चुनौतियों और कटु अनुभवों को *कथा नीलगढ़* का हिस्सा बनाया तो ज़रूर है पर उसकी गहन पड़ताल में न जाकर उसकी तवज्जो को एक अनुभव मात्र तक ही सीमित रखा है। शोषण व हिंसा की घटनाओं का वे ज़रूर समाजशास्त्रीय विश्लेषण भी करते हैं और समाज के अनेक चेहरों में से एक इस चेहरे को अपनी किताब के आइने के माध्यम से सामने लेकर आते हैं।

पुस्तक से सम्बन्धित एक बहुत रोचक अनुभव अनन्त के एक शिक्षाविद्, शोधकर्ता और जागरूक नागरिक के रूप में सोचने और काम करने के अलग-अलग तरीक़ों से पहचान और अध्ययन का रहा। शिक्षा व शिक्षण के अपने प्रयोगों और बच्चों के बारे में बात करते हुए उनका रवैया बहुत जोशीला, आशावादी, और वर्तमान पर दृष्टि रखने वाला नज़र आता है, एक शोधकर्ता के रूप में उनके प्रश्न गहन हैं और बार-बार काम में धैर्य की पैरवी है, वहीं सामाजिक मुद्दों पर समझ बनाते या सवाल उठाते समय वे काफ़ी संयत, सबको साथ लेकर ही चलने पर दृढ़ व दूरगामी परिणामों पर सतत मन्थन करते और उसी के अनुसार अपनी रणनीति बनाते और उसपर अमल करते दिखते हैं।

किताब का एक अन्य आकर्षक पहलू शिवांगी सिंह के चित्र हैं। ये चित्र बीच-बीच में आकर आपको *कथा नीलगढ़* से जोड़े रखते हैं। ये चित्र कभी भी आपके ज़ेहन में बन रही नीलगढ़ की तस्वीर को प्रभावित करने का प्रयास नहीं करते बल्कि शब्दों पर चल रही आपकी आँखों को एक अर्धविराम देकर, बिना आपका ध्यान भटकाए वापस ले चलते हैं, नीलगढ़ की ओर।

*सभी चित्र : शिवांगी सिंह, पुस्तक *सब मज़ेदारी है! कथा नीलगढ़* से साभार

अंकित मौर्य शिक्षा के क्षेत्र में गत 7 वर्षों से विभिन्न भूमिकाओं में सक्रिय हैं। वर्तमान में सेवा मन्दिर, उदयपुर के साथ शिक्षा सम्बन्धी कार्यक्रमों से जुड़े हुए हैं। शोध, बच्चों की कहानियाँ और उनके शिक्षण सम्बन्धी विषयों में गहन रुचि है।

सम्पर्क : ankit.maurya@sevamandir.org